26 राजदूत संजय

0751CH26

उपप्लव्य नगर में रहते हुए पांडवों ने अपने मित्र राजाओं को दूतों द्वारा संदेश भेजकर कोई सात अक्षौहिणी सेना एकत्र की। उधर कौरवों ने भी अपने मित्रों द्वारा काफी बड़ी सेना इकट्ठी कर ली, जो ग्यारह अक्षौहिणी तक हो गई थी। पांचाल नरेश के पुरोहित, जो युधिष्ठिर की ओर से राजदूत बनकर हस्तिनापुर गए थे, नियत समय पर धृतराष्ट्र की राजसभा में पहुँचे। यथाविधि कुशल-समाचार पूछने के बाद पांडवों की ओर से संधि का प्रस्ताव करते हुए वह बोले—"युधिष्ठिर का विचार है कि युद्ध से संसार का नाश ही होगा और इसी कारण वे युद्ध से घृणा करते हैं। वे लड़ना नहीं चाहते। इसलिए न्याय तथा पहले के समझौते के अनुसार यह उचित होगा कि आप उनका हिस्सा देने की कृपा करें। इसमें विलंब न कीजिए।"

यह सुनकर विवेकशील और महारथी भीष्म बोले—"यही न्यायोचित है कि उन्हें उनका राज्य वापस दे दिया जाए।"

भीष्म की बात कर्ण को अप्रिय लगी। वह बड़े क्रोध के साथ भीष्म की बात काटकर दूत की ओर देखता हुआ बोला—"तेरहवाँ बरस पूरा होने से पहले ही उन्होंने प्रतिज्ञा भंग करके अपने आपको प्रकट कर दिया है। इसलिए शर्त के अनुसार उनको फिर से बारह बरस के लिए वनवास भोगना पड़ेगा।"

कर्ण के इस प्रकार बीच में उनकी बात काटकर बोलने से भीष्म को बड़ा क्रोध आया। वह बोले—"राधा-पुत्र! तुम बेकार की बातें कर रहे हो। यदि हम युधिष्ठिर के दूत के कहे अनुसार संधि नहीं करेंगे, तो निश्चय ही युद्ध छिड़ जाएगा और उसमें दुर्योधन आदि सबको पराजित होकर मृत्यु के मुँह में जाना पड़ेगा।"

भीष्म की बातों से सभा में खलबली मचते देखकर धृतराष्ट्र बोले—"सारे संसार की भलाई को ध्यान में रखकर मैंने यह निश्चय किया है कि अपनी तरफ से संजय को दूत बनाकर पांडवों के पास भेजा जाए।"

फिर धृतराष्ट्र ने संजय को बुलाकर कहा—"संजय, तुम पांडु-पुत्रों के पास जाओ। वहाँ श्रीकृष्ण, सात्यकि, विराट आदि राजाओं से भी कहना कि मैंने सप्रेम उन सबकी कुशल पूछी है। वहाँ जाकर मेरी ओर से युद्ध न होने की चेष्टा करो।"

संजय उपप्लव्य को रवाना हो गए। वहाँ पहुँचकर युधिष्ठिर की सभा में सबको विधिवत् प्रणाम करके बोले–"धर्मराज! महाराज धृतराष्ट्र ने आपकी कुशल पूछी है और कहा है कि वह युद्ध की बात नहीं करना चाहते। वह तो आपकी मित्रता चाहते हैं।"

संजय की ये बातें सुनकर राजा युधिष्ठिर बड़े प्रसन्न हुए और बोले–"मैं तो संधि ही चाहता हूँ। युद्ध का विचार करते ही मेरा मन घृणा से भर जाता है। यदि हमें अपना राज्य वापस मिल जाए, तो हम अपने सारे कष्ट भूल जाएँगे।"

संजय ने कहा–"युधिष्ठिर! धृतराष्ट्र के पुत्र न तो अपने पिता की बात पर ध्यान देते हैं, न भीष्म की ही कुछ सुनते हैं। आप सदा से ही न्याय पर स्थिर हैं। आप युद्ध की चाह न करें।"

संजय की ये बातें सुनकर युधिष्ठिर बोले–"संजय! श्रीकृष्ण दोनों पक्षों के लोगों के हितचिंतक हैं। वह जो सलाह देंगे, वैसा ही मैं करूँगा।"

तभी श्रीकृष्ण बोले–"मैं स्वयं हस्तिनापुर जाना उचित समझता हूँ। मेरी यही इच्छा है कि कौरवों से संधि की जा सकती हो, तो की जाए।"

श्रीकृष्ण के बाद युधिष्ठिर फिर बोले–"संजय! कौरवों की राजसभा में जाकर महाराज धृतराष्ट्र को मेरी तरफ से प्रार्थनापूर्वक संदेश सुनाना कि कम-से-कम हमें पाँच गाँव ही दे दें। हम पाँचों भाई इसी से संतोष कर लेंगे और संधि करने को तैयार होंगे।"

युधिष्ठिर का यह संदेश लेकर संजय पांडवों तथा श्रीकृष्ण से विदा होकर हस्तिनापुर को रवाना हो गए। राजसभा में आकर उन्होंने युधिष्ठिर की सभा में जो चर्चा हुई थी, उसका सारा हाल कह सुनाया।

संजय के इस प्रकार कहने पर भीष्म दुर्योधन को दोबारा समझाने के बाद धृतराष्ट्र से बोले–"राजन्! कर्ण बार-बार यही दम भर रहा है कि खत्म कर डालूँगा। किंतु मैं कहता हूँ कि पांडवों की शक्ति का सोलहवाँ हिस्सा भी उसमें नहीं है। तुम्हारा पुत्र उसी के कहे में चलता है और अपने

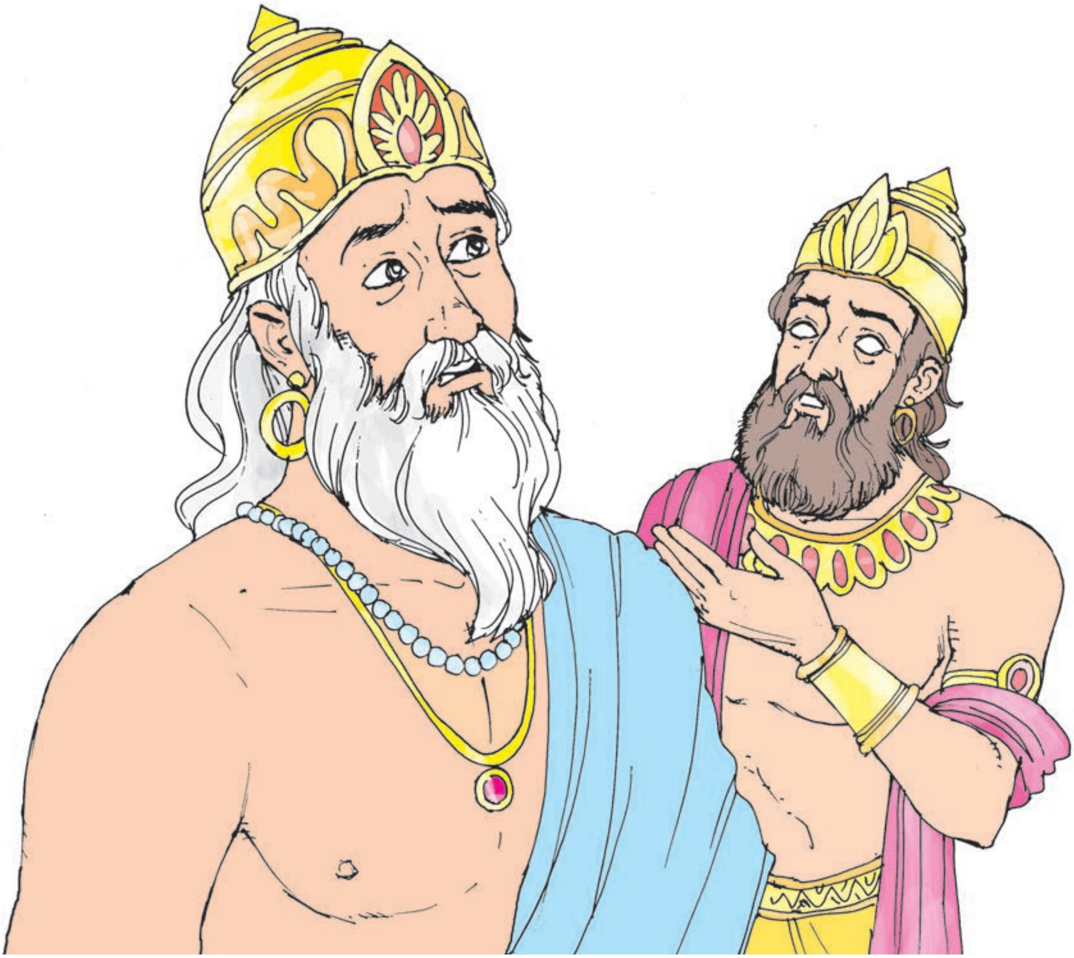

नाश का आप ही आयोजन कर रहा है। विराट नगर पर आक्रमण करते समय, जब अर्जुन ने हमारा दर्प चूर कर दिया था, तब कर्ण वहीं तो था! गंधर्व जब दुर्योधन को कैद करके ले गए थे, तब यह डपोरशंख कर्ण कहाँ छिप गया था? गंधर्वों को अर्जुन ने ही तो भगाया था और दुर्योधन को उनकी कैद से मुक्त किया था।"

इसके बाद धृतराष्ट्र ने संतप्त होकर दुर्योधन को समझाया—"बेटा, भीष्म पितामह जो कहते हैं, वही करने योग्य है। युद्ध न होने दो। संधि करना ही उचित है।"

दुर्योधन, जो यह सब बातें सुन रहा था, उठा और अपने पिता को साहस बँधाता हुआ बोला—"पिता जी, आप भी कैसे भोले हैं, जो यह भी नहीं समझते हैं कि स्वयं युधिष्ठिर हमारा सैन्य-बल देखकर घबरा उठे हैं और इसी कारण आधे राज्य की बात छोड़कर अब केवल पाँच गाँवों की याचना कर रहे हैं। क्या उनकी इस पाँच गाँववाली माँग से यह सिद्ध नहीं होता है कि हमारी ग्यारह अक्षौहिणी सेना देखकर युधिष्ठिर के मन में भय उत्पन्न हो गया है? इतने पर भी आपको हमारी विजय के बारे में संदेह हो रहा है। यह बड़े आश्चर्य की बात है!"

धृतराष्ट्र ने समझाते हुए कहा–"बेटा, जब पाँच गाँव देने से ही युद्ध टलता है, तो बाज़ आओ युद्ध से। तुम्हारे पास तो फिर भी पूरा–का–पूरा राज्य रह जाता है। अब हठ न करो।"

लेकिन इस उपदेश से दुर्योधन चिढ़ गया और बोला–"मैं तो सुई की नोंक के बराबर भूमि भी पांडवों को नहीं देना चाहता हूँ। आपकी जो इच्छा हो, करें। अब इसका फैसला युद्धभूमि में ही होगा।" यह कहता–कहता दुर्योधन उठ खड़ा हुआ और बाहर चला आया। सभा में खलबली मच गई और इस गड़बड़ी में सभा भंग हो गई।

इधर संजय के उपप्लव्य से रवाना हो जाने के बाद युधिष्ठिर श्रीकृष्ण से बोले–"वासुदेव! संजय तो महाराज धृतराष्ट्र के मानो दूसरे प्राण हैं। उनकी बातों से मुझे महाराज के मन की बात स्पष्ट रूप से मालूम हो गई है। मैंने तो कहला भेजा है कि मैं तो केवल पाँच गाँवों से ही संतोष कर लूँगा, किंतु ऐसा लगता है कि वे दुष्ट इतना भी देने को तैयार नहीं होंगे। इस बारे में अब आप ही सलाह दे सकते हैं।"

युधिष्ठिर की बातें सुनकर श्रीकृष्ण ने कहा–"युधिष्ठिर! मैंने भी एक बार स्वयं हस्तिनापुर जाने का इरादा कर लिया है। तुम लोगों के स्वत्वों को युद्ध से बचाने की चेष्टा करूँगा। यदि मैं सफल हुआ, तो इससे सारे संसार का कल्याण होगा।"

युधिष्ठिर ने कहा–"श्रीकृष्ण! मुझे लगता है कि आप वहाँ न जाएँ। दुर्योधन का कोई ठिकाना नहीं है कि वह कब क्या कर बैठे! मुझे भय है कि कहीं वह आप पर ही प्रहार न कर दे।"

श्रीकृष्ण बोले–"धर्मपुत्र! मैं दुर्योधन से भली–भाँति परिचित हूँ। फिर भी हमें प्रयत्न करना ही चाहिए। किसी के यह कहने की गुंजाइश ही मैं नहीं रखना चाहता कि मुझे शांति स्थापित करने का जो प्रयास करना चाहिए था, वह नहीं किया। इसलिए मेरा तो जाना ही ठीक होगा।"

इतना कहकर श्रीकृष्ण हस्तिनापुर के लिए विदा हुए।